इकाई 9 उत्तरी और पूर्वी भारत

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपको :

- उन क्षेत्रों की जानकारी होगी जिनको उत्तरी एवं पूर्वी भारत में शामिल किया गया है;
- राजतंत्र की वास्तविक प्रकृति का ज्ञान हो जाएगा;
- प्रशासनिक एवं वित्तीय शक्तियों के वितरण के विषय में जानकारी प्राप्त होगी;
- भू-पतियों तथा राज्य अधिकारियों की भूमिका के विषय में जानकारी प्राप्त होगी;
- भूमि वितरण के आधार पर प्रशासनिक ढांचे में होने वाले परिवर्तनों की जानकारी हो सकेगी;
- सांमतों के शक्ति-पदानुक्रम के विषय में जानकारी होगी;
- वंश एवं भू-स्वामित्व का प्रभाव के विषय में जानकारी प्राप्त होगी;
- सामंतों के कार्यों की जानकारी होगी;
- भू-पतियों के आंतरिक संबंधों के विषय में भी ज्ञान हो जाएगा; और
- राजनीतिक प्रभुत्व के वैचारिक आधार का ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

9.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व की इकाई 8 में आपका परिचय सन् 800-1300 ई. तक भारतीय उपमहाद्वीप के राजनीतिक संगठन की प्रकृति पर सैद्धांतिक बहस से कराया गया। वर्तमान इकाई में उत्तर तथा पूर्वी भारत का अध्ययन एक उदाहरण के रूप में किया गया है। इसका पुनर्विश्लेषण सामंतीय राजनीतिक संगठन की अवधारणा के अनुरूप ही किया गया है। इस इकाई में तथाकथित केन्द्रीकृत राजतंत्रों की सीमित शक्तियों तथा नये राजतंत्रों की वास्तविक प्रकृति को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। इस इकाई में हम भू-स्वामित्व, प्रशासनिक एवं वित्तीय शक्तियों के वितरण और न्यायिक तथा पुलिस अधिकारों के हस्तांतरण के प्रतिमानों के विषय में चर्चा करेंगे। हम इस इकाई में नवीन प्रकार की नौकरशाही के उद्भव, सामंतों के पदानुक्रम तथा सामंतों एवं अधिकारियों के विभिन्न प्रकार के कार्यों का विवेचन करेंगे। ये सभी बहु-केन्द्रित राजनीतिक शक्ति के ढांचे के उदय के संकेत उस क्षेत्र में हैं जिसके विषय में हम चर्चा कर रहे हैं। इस इकाई में इस ढांचे के वैचारिक आधार पर भी प्रकाश डाला जाएगा।

9.2 क्षेत्र की परिभाषा

1950 के दशक के प्रारंभ से लिखे गए ऐतिहासिक लेखों में उत्तरी एवं पूर्वी भारत के राजनीतिक ढांचे के संबंध में बहुत से प्रश्नों को स्पष्टता से उठाया। यह राजनीतिक ढांचा सभी क्षेत्रों में तथा सभी स्तरों पर हुए परिवर्तनों का परिणाम था। इन परिवर्तनों की गति को भूमि अनुदानों की व्यवस्था ने निर्धारित किया (देखें खंड 1)। अभी हाल में राजनीतिक ढांचे पर लिखे गए ऐतिहासिक लेखों में मुख्यतः सामंतवाद की अवधारणा को ही विश्लेषण का प्रधान आधार बनाया गया है।

उत्तरी तथा पूर्वी भारत को किस प्रकार परिभाषित किया जाए? इसमें मुख्यतः विंध्याचल पर्वत के उत्तर के भू-भाग से हिमालय की तराई तक का क्षेत्र शामिल किया गया है। लेकिन इस क्षेत्र से आधुनिक गुजरात, राजस्थान एवं मध्य प्रदेश को अलग रखा गया है क्योंकि ये प्रदेश पश्चिमी एवं मध्य भारत के भू-भाग हैं (देखें इकाई 10)। इस प्रकार उत्तर भारत में कश्मीर, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा एवं उत्तर प्रदेश आते हैं और पूर्वी भारत के अंतर्गत बिहार, बंगाल (बंगला देश सहित), उड़ीसा तथा ब्रह्मपुत्र घाटी सहित असम को रखा गया है। इन क्षेत्रों की महत्त्वपूर्ण राजनीतिक शक्तियों के विषय में इकाई 8 के उपभाग 8.2.1 में पहले ही लिखा जा चुका है।

9.3 शक्तियों का विभाजन : राजा का नवीन स्वरूप

प्रारंभिक मध्यकाल में राजा भारी भरकम शब्दों वाली उपाधियों जैसे कि **परम भट्टारक, महाराजाधिराज, परमेश्वर** आदि को धारण करते थे। इन भारी-भरकम उपाधियों के कारण अक्सर राजाओं को शक्तिशाली केंद्रीकृत राजत्व का प्रतीक समझ लिया जाता है। परन्तु यह सत्य नहीं है। क्षेत्रीय विभाजन, प्रशासनिक तथा वित्तीय शक्तियों के वितरण से जुड़े प्रमाण वास्तविक शक्ति के केन्द्रों को स्पष्ट करते हैं। भाटो की चाटुकारिता ने राजाओं के चारों ओर एक आडम्बरपूर्ण वातावरण बना दिया। वे राजाओं को राजाओं के राजा समझने लगे और दैविक शक्ति से जोड़ने लगे। राजा का इस प्रकार का चित्रण करने का यह परिणाम हुआ कि वह अब राज्य का वास्तविक प्रमुख रहने की अपेक्षा एक व्यक्तिगत व्यक्ति अधिक बन गया। यह एक केंद्रीकृत शक्ति का ढांचा न होकर बहु-केंद्रों वाली शक्ति का ढांचा हो गया था।

9.3.1 प्रशासनिक इकाइयों का विकास

राजनीतिक ढांचे की मुख्य विशेषता राजनीतिक एवं आर्थिक शक्तियों का विभाजन है। अभिलेखीय प्रमाणों में **भुक्ती, मंडल, विषय** जैसे शब्दों का वर्णन किया गया है। पालों के शासन में **पुन्द्रावर्धन-भुक्ती, वर्धमान भुक्ती, दंड भुक्ती, तिराभुक्ती** आदि थे। मंडलों का प्रचलन बंगाल में अधिक था, लेकिन बिहार में बहुत कम। पाल अभिलेखों में **न्यास** या **विभि** और **खांडला** जैसी कुछ छोटी प्रशासनिक इकाइयों का भी वर्णन किया गया है। बारहवीं सदी की वैद्य देव के ताम्र अनुदान-पत्र, जो असम से प्राप्त हुआ है, में भुक्ती मंडल एवं विषय का वर्णन किया गया है। उड़ीसा में भी विषयों एवं मंडलों का उल्लेख 12वीं सदी के प्रमाणों में माही परिवार को दिए जाने वाले भूमि-अनुदानों के रूप में उद्धृत किया गया है। **पत्ताल** एवं **पाठक** गहड़वालों के अंतर्गत प्रशासनिक इकाइयाँ थीं।

साहित्कि स्रोतों में भी ऊपर उल्लेखित बहुत सी प्रशासनिक इकाइयों का वर्णन किया गया है। हरिसेन की 10वीं सदी की रचना **कथा-कोष** में विषय का उल्लेख राजा की एक जागीर के रूप में किया गया है जिसके अधीन (राजा के) एक सामंत था। कश्मीर के इतिहास पर रचित **राजतरंगिनी** में **स्व-मंडल** तथा **मंडलांतर** में विभेद किया गया है। इसके अनुसार कश्मीर में राजा अपने मंडलों पर प्रत्यक्ष प्रशासनिक नियंत्रण रखता था, जबकि दूसरे मंडलों पर शासन सामंत के द्वारा किया जाता था। इन मंडलों पर एक सरदार (प्रमुख) की सहायता से भूमि अनुदानों के द्वारा गांव को सामंत सरदारों को दिया जाता था या वे ताकत के बल पर इन पर अधिकार कर लेते थे या फिर कुछ गांव वालों के व्यक्तिगत तौर पर समर्पण आदी तरीकों के द्वारा प्रशासन किया जाता था। इसी ग्रंथ में एक प्रशासनिक इकाई के लिए **गुलमा** शब्द का प्रयोग हुआ है। इसके अंतर्गत तीन से पांच गांव तक होते थे। **राजतरंगिनी** में **ग्रामपति, ग्रामाधिपति, देशग्रामापति, विम्प्रातिम्शाग्रामापति, सहस्त्रग्रामापति** जैसे शब्दों का प्रयोग गावों के पदानुक्रम को अभिव्यक्त करता हैं। ग्रामों के मुखियाओं को अदा किए जाने वाले कर की मात्रा एवं कर-प्रणाली के स्वरूप को भी स्पष्ट किया गया है। दशश (दस गांवों का मुखिया) को उतनी ही भूमि प्राप्त होती थी जितनी वह एक हल से जोत सकता था। **विम्प्रातिशा** (20 ग्रामों का मुखिया) को संपूर्ण गांव पारितोषिक के रूप में प्राप्त होता था।

9.3.2 प्रशासनिक एवं वित्तीय अधिकारों का हस्तांतरण

यह विभिन्न स्तरों पर प्रशासनिक इकाइयों की वृद्धि मात्र न था। पुलिस, अपराध, विधि एवं न्याय-प्रशासन सहित अन्य प्रशासनिक और वित्तीय अधिकारों को भूमि अनुदान प्राप्त कर्त्ताओं को दे दिए जाने से राजा एवं किसानों के बीच भू-स्वामियों का एक कुलीन वर्ग पैदा हो गया। लेकिन इस प्रक्रिया की गहनता एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भिन्न थी। प्रशासनिक शक्तियों के विभाजन, जो सामंतीय राजनीतिक प्रणाली की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है, को शक्ति केन्द्रों के निरंतर स्थानांतरण द्वारा निर्देशित किया जा सकता है। इस प्रवृत्ति का एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण पाल इतिहास के प्रमाणों

में संकेतित **नौ स्कन्धवर** (विजय सैन्य कैंप) है। इसी प्रकार के इक्कीस स्कन्धवरों का उल्लेख चंदेलों के स्रोतों में भी मिलता है। लेकिन इस संदर्भ में प्रतिहारों में कुछ स्थिरता थी क्योंकि केवल उज्जैनी तथा महोदया (कन्नौज) का ही वर्णन उनकी राजधानियों के रूप में मिलता है। राजधानी परिवर्तन, किलेबंदी आदि भी राजनीतिक शक्ति के कार्य हैं। यह उल्लेखनीय है कि पाल शासकों ने अपने साम्राज्य में 20 किलों का निर्माण कराया।

9.3.3 राजा बनाने में भू-पतियों की भूमिका

सत्ता का मंत्रियों के हाथों में एकत्रित हो जाना प्रारंभिक मध्य काल में राजत्व की प्रकृति की एक और उल्लेखनीय विशेषता थी। क्षेमेन्द्र द्वारा लालची मंत्रियों का स्पष्टवादी वर्णन तथा कल्हन द्वारा **दमरों** के जुल्मों एवं षडयंत्रों का रोचक चित्रण स्पष्ट करता है कि मंत्रीगण स्वार्थी थे और इन्हें शायद ही जनता की भलाई से कोई लेना-देना था। 12वीं सदी ई. के एक ग्रंथ **मनसोल्लास** में राजा को यह सलाह दी गई है कि वह अपनी प्रजा की रक्षा न केवल लूटेरों से अपितु मंत्रियों सहित वित्तीय एवं राजस्व अधिकारियों से भी करनी चाहिए। उड़ीसा के सोमवंशियों ने स्पष्ट किया है कि सामंत राजा को हटा सकते थे और उसको सिंहासन पर बैठा भी सकते थे। लेकिन इस प्रकार के मामलों की संख्या न बहुत अधिक थी और न ही इसको वैधता प्राप्त थी।

बोध प्रश्न 1

1) प्रारंभिक मध्यकाल के राजाओं की भारी-भरकम उपाधियों पर टिप्पणी लिखिये।

....

....

....

....

....

2) उत्तरी तथा पूर्वी भारत के विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित विभिन्न प्रशासनिक इकाइयों के नाम बताइए।

....

....

....

....

....

3) प्रशासकीय एवं वित्तीय अधिकारों के हस्तांतरण से आप क्या समझते हैं? संक्षेप में लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

9.4 रूपांतरित नौकरशाही

जिस तरह स्थानीय इकाइयों के रूप में प्रशासनिक शक्तियों का विभाजन हुआ ठीक उसी के समांनांतर प्रशासनिक व्यवस्था के अंतर्गत नौकरशाही के ढांचे में भी रूपांतरण हुआ। भूमि अनुदानों के द्वारा अधिकारियों तथा सामंतों को वेतन देना, सामंतों का पदानुक्रम, राजाओं तथा अधिकारियों की उपाधियों का सामंतीकरण और वंश के लोगों को भूमि का वितरण इस नयी नौकरशाही की विशेषताएं थीं।

9.4.1 अधिकारी, भू-पति और भूमि

स्कन्द-पुराण का **ब्रहम-खंड** जो सामान्यतः 8-9 सदी ई. से 13वीं सदी ई. तक के भारत के इतिहास एवं संस्कृति पर प्रकाश डालता है, गांवों के अनुदानों की उस लंबी ऐतिहासिक कथा का विवरण प्रस्तुत करता है जिसके अनुसार राजा राम ने धार्मिक अनुष्ठानों को संपन्न करने के बाद कई गांवों को 18000 ब्राहमणों 36,000 वैश्य एवं इससे चार गुणे शुद्रों के साथ अनुदान में दिया। दान-प्राप्त कर्त्ताओं को इन वैश्यों तथा शुद्रों को उनकी सेवा के लिए प्रदान किया गया। राम को सामान्य जनों का विश्वास प्राप्त था, इसलिए हस्तांतरित लोग दान प्राप्त कर्त्ताओं की आज्ञाओं का पालन करते। बाद में इन दान प्राप्त कर्त्ताओं ने स्वयं आपस में ग्रामों को बांट लिया। इस तरह के संकेत मिथ्या मात्र नहीं है बल्कि ऐतिहासिक प्रमाणों में इनकी अपनी निश्चित जड़ें हैं और ये ऐतिहासिक प्रमाण साहित्य एवं शिलालेखों के उन प्रमाणों से पैदा हुए हैं — जो तिथिक्रम तथा भौगोलिक रूप से व्यापक तौर पर बिखरे पड़े हैं।

मनु ने 200 ई. में ही ऐसे प्रशासनिक पदाधिकारियों को भूमि अनुदानों की चर्चा की है जिनके अधीन 1,10,20,100 एवं 1000 गांव होते थे। सेवा के बदले भूमि अनुदान करने की प्रथा में उत्तर-गुप्त शताब्दियों में और तेजी आयी।

महेन्द्रपाल द्वितीय के प्रतापगढ़ अभिलेख में एक ऐसे गांव के अनुदान का उल्लेख है जो तलवारगिका हरिशेन के अधीन था। ऐसे बहुत से साक्ष्य उपलब्ध हैं जिनसे यह स्पष्ट है कि सैन्य सेवाओं के बदले दिये जाने वाले अनुदानों की संख्या में काफी वृद्धि हुई। दसवीं सदी ई. से 12वीं सदी ई. तक के बिहार तथा बंगाल से जुड़े साहित्य में **देश्या, करज, ग्रामजा** और **प्रतिपटका** आदि मंत्रियों, अपने वंश के सदस्यों तथा सैन्य सेवा करने वालों को दिए जाने वाले कई तरह के भूमि अनुदानों का उल्लेख किया गया है। 1133 ई. का कमौली ताम्र-पत्र (पट्टिका) गहड़वाल नरेश गोविन्द चंद्र के एक पूर्वज द्वारा एक सरदार को **राजपट्टि** (शाही मुकुट) पर दिए गए भू अनुदान का उल्लेख करता है। पाल नरेशों के भूमि अनुदानों में उल्लिखित **राजा, राजपुत्र, रनका, राजरजनका, महासामंत** आदि ज्यादातर सामंत भूमि से जुड़े हुए थे। कभी-कभी ये सामंत भी अपने स्वामी की आज्ञा से या उसकी आज्ञा के बिना भूमि अनुदानों को देते थे। इसको उप सामंतीय व्यवस्था का नाम दिया गया है और यह विशेषतया गुर्जर-प्रतिहार राजाओं के अधीन विकसित हुई। वास्तविक अनुदान प्राप्तकर्त्ताओं को अपनी **वृत्ति** के लिए इस भूमि पर स्वयं खेती करने या किसी अन्य से खेती कराने अथवा स्वयं उपभोग करने या दूसरों द्वारा करवाने का अधिकार प्राप्त हो जाता था। इससे उन्हें अपनी भूमि किराये पर देने, उप-सामंतीय व्यवस्था देने या उस पर काम करने वाले किसानों को निकालने की स्वतंत्रता प्राप्त होती थी। उड़ीसा के मध्यकालीन भूमि अनुदानों में **भोगी महाभोगी, बृहद्भोगी, सामंत, महासामंत, रण, राजवल्लभ** आदि का उल्लेख मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है ये सभी बिचौलिये भू-स्वामी थे जो सैनिक एवं प्रशासनिक कार्य भी करते थे।

11वीं तथा 12वीं ई. शताब्दियों में कुछ ऐसे भी मुख्य अधिकारी थे जिनके वेतन का भुगतान पूर्णरूपेण स्थायी तौर पर करों द्वारा ही किया जाता था। राजस्व एकत्रित करने, पुलिस सहित अपराधिक प्रशासनिक अधिकारी, आय-व्यय का लेखा रखने वाले तथा महल कर्मचारी उन करों को प्राप्त करते थे जो विशेषकर उनके लिए एकत्रित किये जाते थे। **अक्षपट्टलिका,** प्रतिहार और **विषतियाथू** (संभवतः अट्ठाइस गांव के समूह का राजस्व अधिकारी) जैसे अधिकारी गहड़वाल सम्राटों के अधीन इस प्रकार के करों को प्राप्त करते थे।

12वीं सदी ई. के गहड़वालों के अभिलेखों में **अक्षपटल-प्रस्थ, अक्षपटल-अदय, प्रतिहार-प्रस्थ** और **विषतियाथू-प्रस्थ** जैसे शब्दों का उल्लेख किया गया है। लेकिन वह स्पष्ट नहीं है कि ये कर उनको दिए जाने वाले संपूर्ण वेतन का भाग था या फिर उन्हें अतिरिक्त धन के रूप में इनको दिया जाता था। फिर भी इतना तो निश्चित है कि ये अधिकारी-गण बहुत अधिक शक्तिशाली हो गये और अतिरिक्त आमदनी के अनुदानों पर भी अपना दावा प्रस्तुत करते थे। कुल मिलाकर इस परिपाटी का परिणाम यह हुआ कि विशेष करों को प्राप्त करने वाले बहुत से राज्य अधिकारियों के इस अधिकार ने, इन करों की मात्रा चाहे कुछ भी थी — किसानों की भूमि में एक बिचौलिये भू-स्वामी को कुछ हितों सहित निश्चित तौर पर पैदा किया।

9.4.2 सामंतों का पदानुक्रम

12वीं सदी के आते-आते सामंतों की पदानुक्रम व्यवस्था उल्लेखनीय रूप से स्पष्ट होने लगी थी। 12वीं सदी ई. के एक ग्रंथ ने सामंतों के अधीनस्थ ग्रामों की संख्या के आधार पर सामंतों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है **महामंडलेश्वर** (100,000 गांवों का सामंत), **मण्डलिका** (50,000 गांवों का सामंत), **महासामंत** (20,000 ग्रामों का सामंत, लघु सामंत और **चतुरमश्का** (क्रमशः 10,000, 5,000 और 1,000 ग्रामों के सामंत)। रामपाल के शासन काल के लेखक—जिसने बंगाल के विषय में लिखा — संध्याकार नन्दी ने **मण्डलाधिपति, सामंत चक्र-चूड़ाणि, भूपाल** और **राजा** जैसे शब्दों का उल्लेख किया है।

सामंतों के पदानुक्रम का उल्लेख शिलालेखों में भी मिलता है। चम्बा राज्य के अभिलेखों में **राजनका** और **राजपुत्र** जैसे शब्दों का उल्लेख हुआ है। **सामंत, महासामंत, महासामंताधिपति** और **ठाकुर** जैसे शब्दों का चित्रण **गढ़वाल** राज्य के 11वीं सदी ई. के अभिलेखों में किया गया है। सन् 830 ई. के तेजपुर अभिलेख में असम के **शलस्तम्भा** वंश के श्री हरजरवर्मन की **महाराजधिराज-परमेश्वर, परमभट्टाकारक** जैसी उपाधियों का उल्लेख किया है जिसके (इस राजा के) अधीन **महासामंत** श्री सुचित थे। इस अभिलेख में शिलाकीट्टाकावलेया को सामंत के रूप में उद्धृत

किया गया है। बंगाल के शासक लक्ष्मण सेन केशक्तिपुर ताम्रपत्र में **राजा, राजन्या, रणका,** और **राजपुत्र** जैसे शब्दों का उल्लेख हमें मिलता है।

9.4.3 नौकरशाही का सामंतीकरण

उत्तर भारत के राज्यों से संबंधित अधिकतर अभिलेखों में बहुत से अधिकारियों को सूचीबद्ध किया गया है। पाल शासकों के भूमि संबंधी अभिलेखों में चार दर्जन अधिकारियों तथा सामंतों का उल्लेख किया गया है और इनमें से कुछ पैतृक भी थे। दो दर्जन से अधिक अधिकारियों का वर्णन गहड़वाल अभिलेखों में भी किया गया है। चौहानों, चंदेलों तथा कलचुरियों के अधीनस्थ प्रदेशों में भी स्थिति कोई विशेष भिन्न न थी। यहाँ तक कि सामंतों के अधीन भी अनेक अधिकारी होते थे। मिथिला के करनाता क्षेत्र के **महामण्डलिका** संग्राम गुप्ता के अधीन दो दर्जन से अधिक अधिकारी कार्यरत थे। इन अधिकारियों की उपाधियों एवं पदों का सामंतीकरण इस काल की उल्लेखनीय विशेषता थी। इस विशेषता की ओर स्पष्ट इशारा **'महा'** उपसर्ग के प्रयोग से भी होता है। प्रारंभिक पाल शासक धर्मपाल तथा देवपाल के अधीन **'महा'** उपसर्ग का प्रयोग करने वाले आधा दर्जन से भी कम अधिकारी थे लेकिन नवयानपाल के समय में यह संख्या बढ़कर नौ हो गई। जबकि संग्राम गुप्ता के अधीन ऐसे अधिकारियों की संख्या अधिकतम 18 थीं। इस नवोदित व्यवस्था को आसानी से पहचाना जा सकता है। अर्थात — जितनी बड़ी संख्या में किसी भी राज्य के अंतर्गत **'महा'** उपसर्ग को धारण करने वाले होंगे उसी अनुपात में सामंतों की शक्ति कम होगी। इसी तरह से जितने बाद का राज्य होगा **'महा'** उपसर्ग का उपयोग करने वालों की संख्या उतनी ही अधिक होगी। अधिकारियों के बढ़ते सामंतीकरण की प्रवृत्ति उपसर्गों को प्रयोग में भी परिलक्षित होती है। जिन उपसर्गों का प्रयोग राजाओं और सामंतों के संबंधी को निर्धारित करने के लिये किया जाता था अब उन उपसर्गों का प्रयोग राजा और अधिकारियों के संबंधों को निर्धारित करने के लिये किया जाने लगा। **पादपद्मोपजीवन, राजपदोपजीवन, पादप्रसादोपजीवन, परमेश्वर-पदोपजीवन** जैसी उपाधियों का प्रयोग अधिकारीगण एवं सामंत दोनों करते थे। ये यह भी इंगित करते हैं कि ये अधिकारीगण अपने निर्वाह के लिए अपने स्वामियों के समर्थन पर निर्भर थे। इससे स्पष्ट है कि उनका सामंतीकरण किया गया। अधिकारियों को उनकी स्थिति तथा महत्व के अनुरूप ही बहुत से सामंतीय वर्गीकरण में रखा गया था। यहाँ तक कि कायस्थ लिपिकों के लिए भी **रणका** और **ठाकुर** जैसी उपाधियों का प्रयोग किया गया जो उनके कार्य को स्पष्ट करने के स्थान पर उनके सामंतीय एवं सामाजिक प्रतिष्ठा को व्यक्त करती थीं।

9.4.4 भू-स्वामित्व एवं वंश का महत्त्व

महत्त्वपूर्ण सरकारी कार्य को धीरे-धीरे भू-स्वामित्व के साथ जोड़ दिया गया। ऐसे बहुत से उदाहरण है जबकि महत्त्वपूर्ण सरकारी कार्यों को न केवल सरदारों तथा अधिकारियों को सौंपा गया बल्कि राजा के द्वारा इन्हें अपने वंश के सदस्यों तथा संबंधियों को दिया गया। उत्तर प्रदेश के वर्तमान पीलीभीत जिले के क्षेत्र में हमें चिंद वंश के सरदार द्वारा शासन करने का एक उद्धरण प्राप्त होता है। ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं जिसमें वंश को आधार मानकर गाँवों को बारह की इकाई में विभाजित किया गया है। कन्नौज के शासक महेन्द्रपाल के सन् 893 ई. के ऊना ताम्रपत्र में यह उद्धृत किया गया है कि बलवर्मन **महासामंत** के अधीन 84 ग्राम थे। रानियों के लिए **ग्रासा** और **भुक्ति** छोटे राजकुमारों के लिए गांवों को भोकत्रिस (स्वामी), सेजा (आवंटन) **राजपुत्र** अर्थात राजा के पुत्र को प्रदान करना और **राजकीय-भोग** (राजा की संपत्ति) जैसी शब्दों का प्रयोग भी हुआ है। 84 गाँवों के समूह के सरदार को 12वीं सदी ई. के अंत तक **चतुराशिका** कहा जाने लगा था। उत्तरी तथा पूर्वी भारत की अपेक्षा पश्चिमी तथा मध्य भारत में वंश के आधार पर भूमि का आवंटन करने की परंपरा का प्रचलन कुछ अधिक ही था। अपने वंश के लोगों के बीच भूमि के वितरण की परंपरा उस कबीलाई व्यवस्था का स्मरण कराती है जिसमें युद्ध में लूटी गई संपत्ति का बंटवारा कबीले के सदस्यों के मध्य होता है।

बोध प्रश्न 2

1) उत्तरी तथा पूर्वी भारत में प्रचलित विभिन्न प्रकार के अनुदानों का विवरण दीजिए।

....

....

....

....

2) **सामंतों के** पदानुक्रम पर पांच पंक्तियाँ लिखिए।

....

....

....

....

....

3) क्या नौकरशाही का सामंतीकरण हुआ? टिप्पणी कीजिए।

....

....

....

....

....

....

4) क्या वंश के आधार पर भूमि अनुदानों को दिया जाता था?

....

....

....

....

....

....

9.5 सामंतों के कार्य

हम जिस काल का अध्ययन कर रहे हैं उसके अंत तक **सामंतों** द्वारा किये जाने वाले कई प्रकार के कार्यों को मान्यता मिल गई थी। इन कार्यों में कुछ इस प्रकार थे — नजरानों की नियमित अदायगी करना, शाही आज्ञाओं का पालन करना, समारोहों के अवसरों पर दरबार में उपस्थित होना, न्यायिक प्रशासन को चलाना, सैन्य अनुबंधों को पूरा करना आदि। उत्तरी बिहार में स्थित मिथिला के चंदेश्वर द्वारा 13वीं सदी ई. में लिखित **राजनीति रत्नाकर** में सामंतों का वर्गीकरण **सकर** एवं **अंकर** में उनके द्वारा अदा किये जाने वाले नजरानों के आधार पर किया गया है।

जैजकाभुक्ती (बुंदेलखंड) के चंदेलों ने अपने सैनिक अधिकारियों को प्रचुर मात्रा में भूमि अनुदान दिये। परमारदीन के ब्राह्मण सेनापति अजयपाल ने सन् 1160 ई. में एक **पद** भूमि का अनुदान प्राप्त किया। कुछ वर्षों बाद सन् 1171 ई. में संपूर्ण गांव का अनदान ब्राहमन सेनापति मदनपाल शर्मा को दिया गया जो उससे पहले लगातार तीन ठाकुरों के पास रह चुका था। चंदेलों द्वारा दिये गये सभी अनुदानों की यह विशेषता थी कि ये अनुदान वर्तमान एवं भविष्य के शुल्कों से मुक्त थे। कभी कभी युद्ध में मृत्यु हो जाने पर भी सैनिक अधिकारियों को अनुदान दिए जाते थे। सन् 1207-08 ई. का त्रिलोकवर्मन का पूर्णतया लौकिक टेहरी ताम्रपत्र ब्राहमण सैनिक अधिकारी को दिये गये वंशानुगत अनुदान का वर्णन करता है।

कायस्थों को भी सैनिक सेवा के लिए अनुदान प्रदान किये जाते थे। वास्तव्या कायस्थ परिवार के सदस्य सैनिक कार्य करते थे। इस वंश के सदस्यों को चंदेल प्रशासन में चंदेल शासक गंड से लेकर भोजवर्मन तक, करीब 300 वर्षों तक, महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त रहा।

गहड़वाल राजाओं के द्वारा **राउत** तथा **रणकाओं** को अनुदान दिये जाने के कई उदाहरण मिलते है। परंतु इन अनुदानों को केवल सैनिक एवं बहादुरी के कार्यों के कारण ही नहीं दिया गया था। लेकिन यह भी सत्य है कि वे सामंत रहे होंगे जो राज्य के प्रत्यक्ष नियंत्रण के अंतर्गत स्थायी अधिकारियों से भिन्न थे। क्योंकि गहड़वाल शासकों के अभिलेखों में उद्धृत अधिकारियों की सूचियों में और **राउत** का उल्लेख नहीं आया है। इस संदर्भ में एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि गहड़वाल शासकों के अधीन एक लेखक की व्यंग्यात्मक रचना लता कमेलका, जो 12वीं सदी ई. की है में **राउतराजा** संग्राम विसार का उल्लेख किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि ग्रामपट्टा संभवतः एक सैनिक अधिकारी के लिए प्रयोग होता था और **राउतराजा** एक सामाजिक पद था।

9.6 सामंतों के आंतरिक संबंध

बड़े एवं छोटे सामंतों के बीच तथा राजा एवं सामंतों के बीच के अनुबंधों की प्रकृति अपेक्षाकृत कुछ अनिश्चित है। संभवतः यह संबंध लिखित समझौतों के रूप में होते थे जिसमें केवल सामंतों द्वारा किये जाने वाले कार्यों का वर्णन होता था। **राजतरंगिणी** में भी दसवी सदी ई. के राजा चक्रवर्मन और दमरा सरदार संग्राम के बीच हुए पारस्परिक मौखिक समझौते का उल्लेख हुआ है। लेकिन हमें इस प्रकार के दृष्टांत बहुत नहीं मिलते। एक ओर तो हमें सामंतों

की अपने क्षेत्रों में स्वायत्तता का उल्लेख उपलब्ध होता है, दूसरी ओर ऐसे प्रमाण भी मिलते हैं — जिनके अनुसार पाल शासक (रामपाल) ने ग्यारहवीं सदी ई. के अंत में घटित कैवर्त्तो के विद्रोह का दमन करने के लिए अपने सामंतों की सहायता प्राप्त की। यहाँ पर एक अन्य तथ्य ध्यान देने योग्य है कि राजा के प्रति वफादारी एवं राज-भक्ति की भावनायें जातिगत महत्त्व से अलग हटकर होती थीं। अतः डाबरा सरकार और काफिले का वैश्य नेता — दोनों का एक ही राजा स्वामी होने के कारण वे स्वयं को आपस में **संबंधी** समझते थे।

राजा एवं सामंतों के संबंधों पर कुछ अंतर्दृष्टि **पंचमहाशब्द** के उपयोग के द्वारा भी डाली जा सकती है। इस शब्द का विकास उत्तर-गुप्त शताब्दियों में सामंत संस्था के रूप में हुआ। बहुत से अभिलेखों से स्पष्ट होता है कि उच्च सामंतीय पद का मापदंड राजा द्वारा **पचंमहाशब्द** की उपाधि प्रदान करना था।

सन् 893 के एक ताम्रपत्र में महासामंत बकवर्मन के द्वारा किये गये भूमि अनुदान का उल्लेख है। बकवर्मन के पिता को कन्नौज नरेश महेन्द्रपाल की कृपादृष्टि से **पचंमहाशब्द** की उपाधि प्राप्त हुई थी। लेकिन यह आश्चर्य की बात है कि इस शब्द का प्रयोग पाल राज्य में नहीं हुआ परन्तु उड़ीसा एवं असम इस शब्द के दृष्टांत मिलते हैं। इसमें संदेह नहीं कि **पंचमहाशब्द** किसी भी सामंत द्वारा प्राप्त किये जाने वाला सर्वोच्च सामंतीय सम्मान था। यहाँ तक कि कोई युवराज भी इस उच्च सामंतीय उपाधि से बड़ी उपाधि प्राप्त नहीं करता था। सामंत **परमभट्टारक महाराजाधिराज-परमेश्वर** जैसी भारी-भरकम शब्दों वाली उपाधि को धारण करने के बावजूद इस विशेषण **(पंचमहाशब्द)** का प्रयोग करते रहे।

12वीं सदी ई. की एक रचना के अनुसार **पंचमहाशब्द** का अभिप्राय पांच संगीतीय यंत्रों के प्रयोग से है। ये यंत्र **श्रींगा** (भोंपू), **तम्मत** (ढोलक), शंख, **मेरी** (नगाड़ा) और **जयघंटा** (विजय की घंटी) आदि है। उत्तर भारत के कुछ भागों में **पचमहाशब्द** का प्रयोग 'महा' उपसर्ग के साथ पांच अधिकारिक पदों के लिये भी किया जाता था। यदि शब्द "शब्द" कास्रोत **शप** से है तब इसका एक अन्य अर्थ शपर्थ या प्रतिज्ञा लेना भी है। यदि ऐसा था, तब राज्य अधिकारियों एवं राजा-सामंत के सबंधों के संदर्भ में **पंचमहाशब्द** की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

उत्तर दसवीं सदी ई. में परिवर्तित आर्थिक परिस्थितियों में भी राजा-सामंत के अनुबंधों तथा सामंत पदानुक्रम में कोई कमी नहीं आयी। व्यापार तथा नकद भुगतान की व्यवस्था ऐसे कारण माने जाते हैं जिनसे सामंतीय व्यवस्था कमजोर हुई। दसवीं सदी ई. से 12वीं सदी ई. तक आंतरिक व्यापार के साथ-साथ विदेशी व्यापार एवं मुद्रा प्रसार के पुनरुत्थान के स्पष्ट संकेत प्राप्त होते हैं। राजनीतिक व्यवस्था के रूप में भारतीय सामंतवाद कमजोर नहीं हुआ बल्कि उसमें गजब की निरंतरता एवं ग्रहणता बनी हुई थी। भारतीय सामंतवाद जैसे लक्षण रूस में भी 17वीं सदी ई. में मिलते हैं। रूस में दास व्यवस्था ने स्वयं को तत्कालीन विकसित होती बाजार-व्यवस्था में आत्मसात करना शुरू कर दिया था। लेकिन यहां पर यह बतलाना आवश्यक है कि सामंतीय आर्थिक ढांचे में दरार पड़ती दिखायी देने लगी। यह बात पश्चिमी भारत पर विशेष रूप से लागू होती है जहाँ व्यापार, मुद्रा प्रसार एवं नगरीय विकास के पुनरुत्थान के कारण पश्चिम भारत की आत्म-निर्भर सामंतीय अर्थव्यवस्था विशेष तनावों के अंतर्गत आ गई थी। लेकिन पूर्वी भारत अर्थात बिहार, बंगाल एवं उड़ीसा में स्थिति बिल्कुल विपरीत थी। यहां की सामंतीय व्यवस्था में काफी लचीलापन स्पष्ट होने लगा था। पश्चिम भारत में राज्य अधिकारियों तथा सामंतों को भूमि अनुदान देने का प्रचलन अभी भी काफी था जबकि पूर्वी भारत में उड़ीसा को छोड़ शेष क्षेत्र में इस प्रथा का प्रचलन काफी कम होने लगा।

9.7 भूमि अनुदान तथा राजनीतिक सत्ता का वैधानिकीकरण

जहाँ तक राजनीतिक संगठन का संबंध है, इसमें भूमि अनुदानों की अखिल भारतीय विशेषता ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया। भूमि अनुदानों के प्रचलन ने राजा एवं सामंत की राजनीतिक सत्ता को सामाजिक एवं वैधानिक मान्यता प्रदान की। पाल शासकों के दौरान बिहार एवं बंगाल में भूमि अनुदानों के कारण ब्राह्मण वर्ग, बौद्ध बिहार तथा शैव मंदिरों का आर्विभाव बिचौलिये भू-स्वामीयों के रूप में हुआ। उत्तर तथा पूर्वी भारत में अनुदान प्राप्त कर्त्ता अधिकतर ब्राह्मण ही थे। ये धार्मिक अनुदान प्राप्त कर्त्ता राजनीतिक सत्ता को वैधता उपलब्ध कराने के महत्त्वपूर्ण साधन थे। सरदारों एवं राजाओं की आडम्बरपूर्ण वंशावली की रचना द्वारा इस उद्देश्य की प्राप्ति की जाती थी। उनके वंशों की उत्पत्ति को महाकाव्यों के नायकों राम एवं कृष्ण से बतायी जाती थी। भूमि अनुदानों से लाभ प्राप्त कर्त्ताओं ने विशेषकर कबीलाई क्षेत्रों में सांस्कृतिक अंतःक्रिया के कार्यक्रम को लागू करके शासक वर्गों के लिए वैचारिक आधार भी उपलब्ध कराया। उदाहरण के रूप में जिस प्रकार ब्राह्मणवादी व्यवस्था में कबीलाई एकता तथा संयुक्तता के चिन्हों को आत्मसात कर लिया गया इस बात का संकेत है। उड़ीसा में राजनीतिक सत्ता का सुदृढ़ीकरण कबीलाई देवताओं को शाही संरक्षण प्रदान करने की प्रभावकारी नीति के माध्यम से हुआ। गोकर्ण स्वामी और स्ताम्भेश्वरी संप्रदायों को आत्मसात करने और जगन्नाथ संप्रदाय के उद्भव की प्रक्रिया नयी वैचारिक शक्ति के प्रतीक हैं। (विस्तृत जानकारी के लिए खंड 2, इकाई 6 देखें)। उत्तर-गुप्त काल में भूमि अनुदानों के द्वारा किए जाने वाले कार्य अर्थात शासक शक्तियों को वैधता प्रदान करना और उनके लिए वैचारिक समर्थन जुटाना न केवल उत्तरी एवं पूर्वी भरत तक सीमित था बल्कि किसी न किसी रूप में देख के सभी भागों में यह विशेषता विद्यमान थी।

बोध प्रश्न 3

1) **सामंतों के मुख्य कार्यों को लिखिए।**

....
....
....
....
....
....
....

2) **पंचमहाशब्द** से आप क्या समझते हैं ?

....
....
....
....
....

3) क्या राजाओं ने अपनी सत्ता को वैधता प्रदान करने के लिए भूमि दान दिये थे ?

....
....
....
....
....

9.8 सारांश

उत्तरी एवं पूर्वी भारत में आधुनिक कश्मीर, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, असम, उड़ीसा और उत्तरी मध्य प्रदेश के कुछ भाग आते हैं। सन् 800 ई. से 1300 ई. के बीच इन प्रदेशों के राजनीतिक ढांचे की निम्नलिखित विशेषताएं थी :

- उस समय में एक नवीन प्रकार का राजतंत्र था जो केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति से काफी दूर था।
- नयी प्रशासनिक इकाइयों का उद्‌भव हुआ जिसमें कई वित्तीय, न्यायिक एवं पुलिस कार्यों को रूपांतरित कर दिया गया था।
- सत्ता के अनेक केंद्रों का उदय।
- नौकरशाही में परिवर्तन के साथ-साथ राजा की सत्ता की प्रकृति भी परिवर्तित हुई।
- नये भू स्वामित्व द्वारा सामन्तों के पदानुक्रमों का उत्थान।
- राज्य अधिकारियों के साथ-साथ संपूर्ण राजनीतिक तंत्र का भी सामंतीकरण हुआ।

9.9 शब्दावली

अदय : कर।

अक्षपट्टलिका : राजस्व अधिकारी।

भोगी : वे बिचौलिये भू-स्वामी जो प्रशासनिक कार्य करते थे।

भुक्ती : प्रशासनिक इकाई।

देशश : दस गांवों का मुखिया।

देश्या : मंत्रियों, परिवार जनों तथा सैनिक कार्य कर्त्ताओं को भूमि अनुदान।

ग्रामजा : **देश्या** की भांति।

करज : **देश्या** की भांति।

खण्डला : प्रशासनिक इकाई।

मण्डलांतर : राजा से पृथक सामंत के अधीन प्रशासनिक विभाजन।

पदोपजीवन : ऐसे सामंत या अधिकारीगण जो अपनी आजीविका के लिये राजा की कृपा पर निर्भर करते थे।

पाठक : प्रशासनिक इकाई।

पट्टला : प्रशासनिक इकाई।

प्रतिपट्टक : **देश्या** की भांति।

राजवल्लभ : **भोगी** की भांति।

शातेश : सौ गांवों का मुखिया।

स्कन्धवरा : विजय/सैनिक शिविर।

विंशतिष : 20 गांवों का मुखिया।

विशतियाथू : शायद 28 गाँवों के समूह का राजस्व अधिकारी।

विषय : प्रशासनिक इकाई।

वीथी : प्रशासनिक इकाई।

9.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) प्रारंभिक मध्य काल के राजा भारी भरकम उपाधियों को धारण करते थे लेकिन उसकी वास्तविक शक्ति में कमी हो रही थी (देखें भाग 9.3)।

2) बंगाल में **भुक्ती, मण्डल, विषय, नयस, विथी** आदि। असम में **भुक्ती, मण्डल** आदि तथा कश्मीर में **गुलमा, मण्डल** आदि (देखें उपभाग 9.3.1)।

3) अनुदान प्राप्त कर्त्ताओं को राजा राजस्व एकत्रित करने के अधिकार या प्रशासनिक अधिकार को प्रदान करता था (देखें उपभाग 9.3.2)।

बोध प्रश्न 2

1) मंत्रियों, योद्धाओं, परिवारजनों या भू-स्वामियों जैसे भिन्न लोगों को भिन्न-भिन्न अनुदान दिये जाते थे जैसे **देश्या, करज, ब्रिनभूगी, राणा** (देखें उपभाग 9.4.1)।

2) उस समय सामंतों का एक निश्चित पदानुक्रम था जो अनुदान प्राप्त कर्त्ताओं के अधिकारों एवं अनुदानों के आकार पर निर्भर करता था (देखें उपभाग 9.4.2)।

3) इस समय में अनेक राज्य अधिकारियों को भूमि अनुदानों द्वारा अदायगी की जाती थी। इससे नौकरशाही के सामंतीकरण का कुछ संकेत प्राप्त होता है (देखें उपभाग 9.4.3)।

4) कभी-कभी ऐसे लोगों को भी अनुदान दिये जाते थे जो कोई विशेष कार्य नहीं करते थे। इसमें एक मात्र महत्त्व अपने वंश के लोगों को दिया जाता था (देखें उपभाग 9.4.4)।

बोध प्रश्न 3

1) कुछ अनुदानों के साथ कोई कार्य जुड़ा हुआ नहीं था। कई बार **सामंत** राजस्व एकत्रित करने, सेना उपलब्ध कराने या कानून व्यवस्था आदि को बनाये रखने जैसे कार्यों में मदद करते थे।

2) पंचमहाशब्द का विकास एक सामंतीय संस्था के रूप में हुआ। यह किसी भी सामंत के द्वारा प्राप्त किया जाने वाला सर्वोच्च सम्मान होता था। विस्तृत जानकारी के लिए देखें भाग 9.6

3) बहुत से अनुदान धार्मिक समूहों या ऐसे व्यक्तियों को प्रदान किये जाते थे जो राजा को शासन करने की वैधता उपलब्ध करा सकें। इस प्रकार के अनुदानों से मुख्य रूप से लाभ ब्राह्मणों को हुआ। (देखें 9.7)।
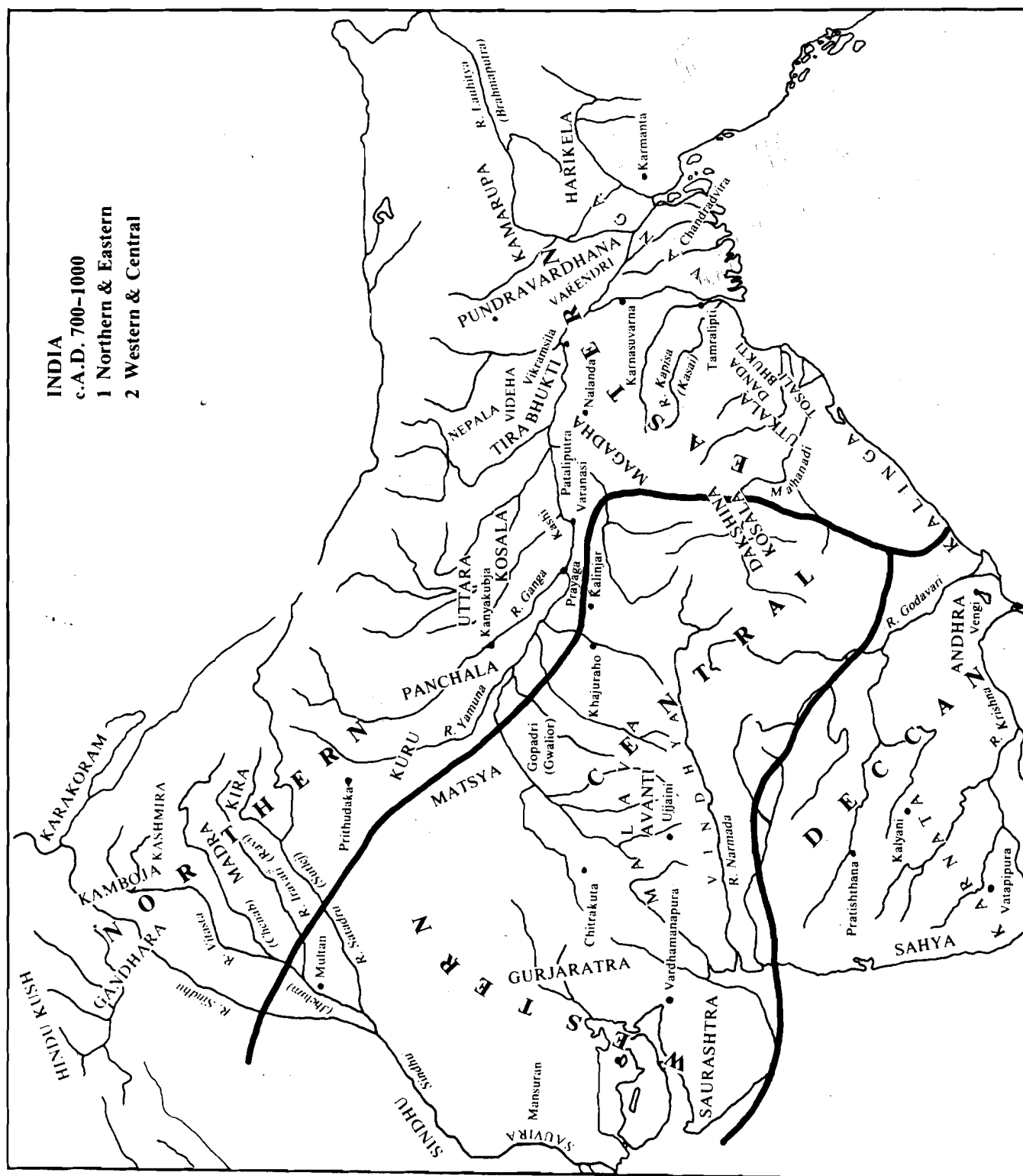
मानचित्र-2 उत्तरी, पूर्वी, पश्चिमी तथा मध्यभारत 700 ई. से 1000 ई. तक